



शब्द यात्रा / रणजीत गीतेश

प्रतिष्ठा

वक्तृ

७००००७

रणजीत गीतेश

शब्द यात्रा/रणजीत गीतेश की कविताएँ

प्रतिध्वनि के लिए मधु जोशी, ३१, सर हरिगम गायनका स्ट्रीट,  
कलकत्ता ७०० ००७ द्वारा प्रकाशित / भागवद सुराना, सुराना  
प्रिंटिंग वर्क्स, २०५ रवीन्द्र मरणी बलकत्ता-७०० ००७ द्वारा मुद्रित ।

आवरण विभूतिभूषण सेनगुप्त

प्रथम संस्करण १९९२

मूल्य तीस रुपये

SHABDA YATRA

Poems by RANJEET GEETESH

बाबूजी की स्मृति में  
—रणजीत



## अनुक्रम

मत्कीच मिथुनात्	९
सलीव पर	११
सपनो का सौदागर	१२
भूखे नगे	१४
चालीस साल से	१५
आज का अभिमन्यु	१६
निराध	१७
भूय स्नान	१८
शाध	१९
मूरज देवता	२०
ये हाथ	२१
पहचान	२३
इतिहास हम एक हैं	२४
वृत्त के अ दर दा हाथ	२६
मेरा कमरा	२७
काली तितलो और बुद्ध प्रतिमा	२८
मानालिसा की मुस्कान	३०
मेरा शहर	३२
हाशिये पर	३४
मौसम यायावर हा गया है	३७
नवसलपथी प्यार	३९
शद यात्रा	४०
काला हीरा	४२
जौग सब तो ठीक है !	४४
जीना क्या होता है ?	४६
होड भरी जिंदगी	४८
ह राम !	४९
विटिया का गुल्लक और व्याह	५०
पुल के नीचे नाव	५२
देश दरकती दीवार	५३
सीपी और समुद्र	५४
बुद्ध की प्रतिमा पान की दुकान	५५







यत्कौच मिथुनात्

यत्कौच मिथुनात्'  
वस इतना ही काफी था  
रत्नाकर का  
वाल्मीकि वनन के लिए ।

पता नहीं  
कविता का जन्म  
दो सफेद या दा लाल बूँदों से हुआ ?

कविता ।

क्या नहीं क्रीच का पख फडफडाता है ?

क्या नहीं

कहीं कुछ धडबता है

और न ही कुछ पिघलता है ?

जादमी खून से लथपथ

छटपटाता हुआ दम ताड रहा है

अबला जीखा से आँचल भ

दूध की जगह खून टपक रहा है

जवाध जीखें पथरा गई हैं

मामूम चेहरा पर

भय और आतक के मुखौट हैं

हमारी जीखा के सामने

जगल-राज्य में मनुज-वध

मृत्यु का आखेटक बन गया है

फिर भी

कवित ।

कहीं कुछ सिहरता क्यों नहीं ?

क्या तू सचमुच मर गई है

या कि तुम्हारी आत्मा जड़ हो गई है ?

मैं जानता हूँ

तुम्हारे चीखने से

उनका कुछ नहीं बिगड़ेगा

मुझे तो ऐसा लगता है

तू आत्म-प्रवचना का दूसरा नाम है ।

तुम जा भी हो

मैं बस इतना जानता हूँ

तुम इस नए महाभारत में

अभिमन्यु के रथ का टूटा पहिया हो । ०

## सलीब पर

चलो, अच्छा ही किया  
जो तुमने दिए कतर  
तितलिया के रंगीन पर ।

फूलों की महक  
हवा में तैरती लाशा की मड़ाध  
में ही बहक गई  
कल्पना में पखा पर बठकर  
कविता  
मिसाइल की तरह आममान से  
बरसान लगी आग  
पखुडिया पर शवनम की जगह  
टपकने लगा लहू  
और प्रकृति  
खामाश—स्तब्ध ।

कवि सोचने लगा  
उसके हाथा में  
कलम है या कारतूस ?

याना की गडगडाहट  
और टंका के शार-शराबे में  
खो गए  
छद-लय ताल ।  
भाषा ने उतार दिए  
शब्दों के निवास  
एक हताश बोखलाहट  
बड़बड़ाता ही रहा आदमी  
और कविता—  
साच के सलीब पर  
गरबिद्ध श्मशान । ०

## सपनों का सौदागर

एक रात

सपना का एक सौदागर आया  
और हमारी भूखी भोली में  
चुपके-से डाल गया  
अनाज जोर सिक्क के बदल  
कुछ सुनहले सपने ।

आँखें खुली

और मैं

खुशी से बल्लिया उछल पडा ।  
उडेल दिय मैं  
अपनी फूस की झेपड़ी के सामन  
परती जमीन पर  
सारे सपने ।

सीचता रहा राज

सुबह-सुबह उठकर

प्रतीक्षारत रहा

—वे अवश्य अकुरित हाग

एक-न-एक दिन ।

दिन पर-दिन गए बीत

पर न अँकुराया कोई बीज ।

एक दिन

किसी ने कानो में कहा—

‘ जरे मूख नादान ।’

क्यों होता हैरान ?  
क्या तू नहीं जानता—  
सपना की फसल  
दिन के उजाले में काटी नहीं  
रात के अँधेरे में बाँड जाती है ।”

सपनों का वह बूढ़ा सौदागर  
जा लाठी टेक  
चलता था तेज  
उमकी ही बकरी ने  
चबा लिया  
मेरे सपना के सारे दाने ।

और वह खुद  
किमी प्रस्तर-स्तम्भ पर  
जाकर खड़ा हो गया  
या किमी अदालत की दीवार पर  
झूल गया  
आश्वासन की मुद्रा में  
अपना दाहिना हाथ  
ऊपर उठाये  
मुस्कुराता हुआ  
मेरी मूर्खता पर ।

मुझे लगा  
मैं छला गया  
वह चला गया  
और मैं पचशाला पाठशाला में  
चरने पर  
सन्चाई का मूत कातता रहा  
सपना की चादर बुनता रहा  
और राम नाम का धुन पर  
सिग धुनता रहा । ०

भूखे-नगे

भूख को हमने गिरवी रख दिया है  
उस मूदखोर महाजा के पास  
जा सुबह-शाम खाना खाकर  
हाजमे की गोलियाँ खाता है ।

और नगापन ?

उसको तो हमने एक्सपाट कर दिया है  
पश्चिमी देशों का  
जहाँ औरतें दो बित्ते कपड़े में ही  
अपना तन ढँक लेती हैं । ०

चालीस साल से

व दौड़ रहा है  
कुर्सी के लिए, पद के लिए  
विधान-सभा में आसन के लिए  
राष्ट्रपति के सिंहासन के लिए  
बोट के लिए नोट के लिए  
शतरंज की चाल में गोट के लिए ।

और

वह दौड़ रहा है  
ढा रहा है  
एक जोड़ा पहिए पर  
मोट पट वाले महाजन का  
सूट-बूट-धारी  
आजादी के अमलातंत्रा को ।

तब

वह बीस का रहा होगा  
गाही बाग की किरपा से  
आजादी मिली ।

गाव की पगडण्डियों पर दौड़ता-दौड़ता  
आज वह  
महानगर की कालतारी चिकनी सड़कों पर  
दौड़ रहा है ।

उसके पीछे एक रिक्शा है  
(दो अशाक-चक्के पर)  
और हाथा में एक धुधरू  
उसकी रोटो उसकी सवारी की जेब में है  
जिस वह चालीस साल से ढो रहा है । ०

## आज का अभिमन्यु

अभिमन्यु है हम ।  
हमारे तमतमाए चेहर के सामने  
हमारी मुठिया म  
लहरा रहा है—  
रथ का टूटा पहिया  
—हमारा आहत आकाश ।

हमारे लिए  
न कही दुःख है  
न काई द्वार  
भदने के लिए  
लक्ष्य भी तो नहीं है काई  
फिर भी रथ के टूट पहिये की तरह  
लडखड़ा रहे हैं हम  
लक्ष्यहीन—पथहीन ।

धुधलाए आकाश में  
सूरज का भी तो  
मुदगान चक्र ने घस लिया है ।

हाथ री, विभ्रातिका राजनीति ।  
क्या ऐसा नहीं लगता  
महाभारत को पुनरावृत्ति का  
प्राक्कथन है । ०



निरोध

शिवलिंगा को  
पारदर्शी भित्तिया पहना  
यह क्वारी सभ्यता  
अपने मातृत्व के स्तन का  
दूध निचाड  
नहला रही है । ०

## सूय स्नान

समुद्र—मक्त की सतरंगी रत्न पर  
लेटे है औंधे  
कई जोड़े नग जिस्म  
लगता हूँ  
सभ्यता के मैदान में  
हुए शहीदा की लाश  
हमने फेंक दी है  
समन्दर के किनारे । ०

शोध

अतीत—

अजायबघर के शा-केस में वद ममो'

वतमान—

सेनिटारियम में कसरानात युवक'

भविष्य—

दा पल की भूल का गभस्थ अहसास । ०

## सूरज देवता

सात अश्वों से जुते रथ पर सवार सूरज देवता ।  
नमस्कार ।

गगन-चुम्बी अट्टालिकाओं के  
बंद काँच के दरवाजे  
और वाम्बे डाइंग के प्रिंटड  
परदा से ढके वातायन के भीतर  
व्यूरोक्रमी का  
तुम्हारी प्रतीक्षा नहीं ।  
डनलोपिलो की गदियों में धँसी  
अलसायी अगड़ाई लती लेटी है वह  
—उसे मुक्ति नहीं चाहिए ।

वह चाहती है तुम्हें  
चिमनियाँ के धुएँ में कैद कर रखना ।

और तुम हाँ कि  
जा तुम्हें करना चाहत हैं अजीकार  
उह ही तुम करते रह जस्वीकार ।

सात अश्वों से जुते रथ पर सवार  
सूरज देवता ।  
तुमका है धिक्कार  
बार-बार ॥ ०


ये हाथ

ये हाथ

जिहान कभी कुरुक्षेत्र में  
चढ़ाई थी गाड़ीव पर प्रत्यक्षा  
इमलिए कि  
इन हाथा न देखा था  
तुम्हारे हाथों में सुदर्शन-चक्र ।

जिन हाथा न

तुम्हारी हथेलिया में  
रख दिया था कवच-कुण्डल  
जिहानि  
अपने मामले फैल हाथा को  
कभी खाली नहीं लौटाया ।

इही हाथा ने ही पाई थी  ,  
बाधि-वृक्ष तले  
तथागत के वरद हस्त की छाया

इही हाथा ने ही उतारा था यूनियन जक  
 जोर लहराया था—  
 लाल किले की प्राचीर पर तिरगा  
 इसलिए कि  
 इन हाथा ने तुम्हार हाथा भ  
 बाँधे थे  
 आस्था के कच्चे बाग ।

लेकिन  
 इन हाथा का तुमने धमा दी  
 बैलट बक्सा के साथ पार्लियामण्ट की कुजी  
 और पं डोरा के बक्स  
 जिनके खुलते ही  
 रागाणु लाचारी  
 बीभारी  
 भुलमरी  
 अनाचार कदम अभिचार  
 हाथ लगे एक साथ  
 और हर तरह से लाचार  
 ये हाथ  
 तुम्हार ही नामने फल गए ।

जिन हाथा भ तुमने धमाई थी गीता  
 निष्काम कमयोग के नाम पर  
 चढवाई थी गाण्डीव पर प्रत्यचा  
 तब भी छला था तुमने  
 इन हाथा को

आज फिर तुम्हार नामने फले हैं ये हाथ  
 तुमसे सूरज नहीं मागत—  
 इन्हें चाहिए दो जून की गटो । •

## पहचान

मेरी पहचान  
मेरा राशन कार्ड है  
गाया राशन कार्ड नहीं  
आइडेंटिटी कार्ड हा ।

मैं नहीं जानता  
मेरी नागरिकता  
संविधान की किस धारा के किम अनुच्छेद में  
परिभाषित है  
सिर्फ इतना जानता हूँ  
सरकार मेरे लिए  
दोनों वक्त का खाना जुटा देती है ?  
इसलिए  
मैं इस देश का नागरिक हूँ ।

भूख ही मापदण्ड है श्री सुब्रह्मण्यम् :  
मेरी नागरिकता का । ०

इतिहास हम एक है

इतिहास  
नागों से नहा लिखा जाता  
इतिहास  
तलबारा से लिखा जाता है  
इतिहास हमला  
और हमलावरा की  
पुछदिला—  
हत्यारा की कहानी है ।

इतिहास ताश के पत्ते की तरह है—  
फटते रहा—फेंटते रहा ।  
पर ताश के पत्ते  
वही रह्य



—जो कल थे

—जो आज हैं

बादशाह-बेगम-गुलाम ।

जर-जमीन जोरु के लिए

इतिहास लिखा जाता रहा

मिलमिला चलता रहा

महाभारत से माहनजोदड़ो तक

स्वार्थों को जोड़ने का

एकता को तोड़ने का

और एकता

बिजली के खम्भे से लटकती

एक मरी हुई चिड़िया है

जिसके इद गिद

प्रजातन्त्र के काव काव-काव

कर रहे है ।

समझौते की मेज पर

बिड़ा है भारत का भूगोल

और हम

उस पर

इतिहास की कलम चला रहे हैं

बाट रहे हैं

सतलज और ब्रह्मपुत्र का पानी

हरियाणा और पंजाब को राजधानी

कोरबा की ही तरह

अपना एक भी गांव

अपने ही भाइया का देने में जानाकानी

और बाते करते है—

—‘हम एक है

हम हैं हिंदुस्तानी ’ । ०

वृत्त के अंदर दो हाथ

जब कभी दीवार पर मैं देखता हू  
—एक जोड़ी सरकती मुड़ियाँ  
घड़ी की परिधि के अंदर  
डोलता दालक  
समय के काण के भीतर ।

एक राटी है टगी  
दीवार पर  
धूमते दो हाथ  
अंदर वृत्त के जाठा पहर ।

नीलाकाश पर  
रक्ताभ दिनकर  
एक राटी-सा  
उठ रहा ऊपर  
हजारों हाथ लहरा स  
निकल बाहर  
पकड़ने को जिस लहरा रहे  
हरदम परेशान  
किस कदर ।

हाथ दो  
पर वृत्त के अंदर  
हजारों हाथ बाहर । ०

## मेरा कमरा

मेरी जिंदगी की हर रात के  
अकेलेपन का यायावर ठहराव—मेरा कमरा ।  
जहाँ रोज़ बुनती हूँ  
स्मृतियों की मकड़िया  
नपना की सुनहरी जाती  
व्यक्तित्व के दण मे  
कभी-कभी बतियाती  
मेरी आँखें ।

विवेक की बुझती बुझती सी मोमबत्ती  
जो मेरे सोने के साथ-साथ  
सो जाती है  
मोरचा लगी कील से लटकी  
घासलेट की काली खाली शीशी  
कालिख पुतो चिटखो चिमनी वाली लालटन  
गवाह है—  
परत-दर-परत  
पहने पुराने कपडों से बना कथा,  
वेदना के धागों से टाकी गई  
अनगिन चुभन  
करबों बदलती है  
मेरी जिंदगी जिस पर ।

मेरा कमरा  
सिर्फ एक पड़ाव है  
मेरी जिंदगी की हर रात का  
अकेलेपन का ठहराव है । ०

### काली तितली और बुद्ध प्रतिमा

शांत शारद रात  
वातायन की राह  
काले-काले पर फरती  
इक तितली आई ।  
कमरे में जधलेटा मैं  
अधमुदी आँख से देख रहा था—  
बैठ गई वह  
बुद्ध-मूर्ति पर ।

कमरे में था अंधकार पर  
प्रतिमा के ही सिर के ऊपर  
विजली बत्ती की आभा थी  
सब कुछ दीख रहा था सुंदर ।

इतने में कुछ मच्छर आये  
झधर-झधर आकर भन्नाए  
मेरी साँरी बिटिया का  
बे काट जगाय ।

रोती उठकर बैठ गई वह  
 मुक्त तनिक गुस्ता-सा आया  
 ताली बजा-बजाकर मैंने  
 मार भगाया ।

चार भगाए, चौदह आये  
 उनकी बढ़ती आवादी से  
 मैं झल्लाया  
 विजली के पखे का  
 मैंने बटन दबाया  
 तेज हवा का झोका आया  
 मच्छर सिर पर पर रख भागे  
 इसी बीच तितली ने भी  
 पर फराये  
 इस कोने से उस काने में  
 उड़-उड़कर वह बैठ गयी थी ।

तभी अचानक  
 तितली गिर गई आहत होकर  
 पखे की पत्ती से कटकर  
 पर भी दूर गिरे बिस्तर पर  
 तितर-बितर  
 बिखर बिखर कर ।

अपराधी-सा मैं घबराकर  
 देखा ऊपर जाख उठाकर  
 गीतम शमन-कक्ष से बाहर  
 खड्ग द्वार पर  
 दण्ड रहे थे पीछे मुड़कर  
 चनिता-मुत शायित बिस्तर पर  
 सुध-बुध खाकर  
 प्रतिमा के मुख-मण्डल पर  
 भाव मुखर । ०

## मोनालिसा की मुस्कान

मोनालिसा का  
मदभरो ? ममतामयी ? आँखा क  
करुण कारका स भाँकती मुस्कान  
और मीपिया अधरो के मधि-स्थल पर खिंची  
व्यग्य की तियक रखा के तरंगो पर तिरती  
प्रश्नमूचक मुद्रा

मानो  
अपने कलाकार का ही  
कुतूहलो दण्डि से देखती हुई  
कह रही हा—  
“भेर लपटा ।

तुम्हारी दण्डि ने मेरी मुस्कान चुरा ली  
और मेरी आँखा की बासना के अतहीन विस्तार में फल  
एक सपाट बियावान रेगिस्तान में  
मातृत्व की मृग-मरीचिका के पीछे भागती  
ममता के मरुद्यान की तलाश को ही  
अपनी तूलिका से तराश

तून

मेरी प्रतिकृति का अपनी कला-साधना का  
अंतिम सापान मान लिया ?

धिक्कार है तुम्हें चित्रकार !  
पथरा क्या गई थी तुम्हारी आंखें  
उम्र दिन  
जिस दिन अपनी गमवती स्त्री को  
युद्ध-जजर वजर खेतों की मेड़ पर खड़ी  
हाथ हिलाती हुई  
'अलविदा' कहती अकेली छाड़  
वह मिपाही चला गया  
और जग के मैदान में जाकर खेत रहा ।

उम्र के नवजात नष्ट शिशु का  
स्तनपान कराती  
क्षुधातुर विधवा माँ की  
आँखा की गहराई में  
उतर्गने की कोशिश क्यों नहीं की  
तुम्हारी कला-दृष्टि ने ?

जगर  
उन अभागिन आत्मा की गीली पलका की  
जोड़ में अटकी  
करुण चातसत्यमयी मुस्कान की  
इक वृद्ध का भी  
तुम्हारी तूलिका रग दे पाती  
ता में मान लती  
तू सच्चे अर्थों में  
एक सफल शिल्पी है  
और तुम्हारी चित्र-कला  
एक शाश्वत चिरतन चित्र-काव्य ।" ०

मेरा शहर

तुम एक अजनबी द्वीप ही मही  
मैं तुम्हारे लिए अजनबी तो नहीं  
न था, न हूँ ।



जिसे तुम अपने आचल में  
समेट लेती हो  
वह तुम्हारे लिए  
कैसे अजनबी हो सकता है ?

खलिहाना में खेल रहा था  
किसी चौपाल से आवाज आई थी  
—'फलना के फलना कमालन कलकत्ता' ।

किसी अँगूरी पहाड़ी पर खड़े होकर  
जुगनुआ की जगमगाती रोशनी में  
किसी द्वीप को देखने में  
जैसा लगता है कलकत्ता ।  
तुम वैसी ही उभरी थी मेरी कल्पना में  
एक चिर-परिचित द्वीप की तरह ।  
मेरे अहसास के जगल में  
हजारों-हजार जुगनू जगमगा उठे थे  
तब  
मैंने माँ से पूछा था  
— कलकत्ता कहाँ विकता है माँ ?

आज  
मैं खुद विक गया हूँ बमोल  
बिछ गया हूँ तुम्हारे विस्तार में  
मेरा अस्तित्व  
तुम्हारे अजनबीपन में समा गया है  
मेरा अजनबीपन  
तुम्हारे अस्तित्व की भीड़ में खो गया है ।

मेरे शहर में  
मैं अजनबी हूँ  
तुम चिर परिचित । ०

## हागिय पर

शहर क सफह पर  
मडक के हाशिय की तरह जिद्धा  
सिद्धू नै शाम का  
स्तटी साडी क किनार  
गाट जाली की तरह जगमगाता  
फला तुम्हारा अचल  
जिसम सज सोमचे  
खट्टा पुचका  
वेस का शरबत  
मोममी रम  
हरे-हरे खीर  
जाम-जमरूद और मतरे  
जूत-चप्पल  
बनियान और ब्रेसियम  
ज्योतिष पजिका पसारे पामिस्ट  
भविष्य टटालता  
पिजडे में बंद ताता  
पराठे और पूरियाँ  
चाउमिंग जोर चिलिचिकेन  
चाय-काफी-लस्सी

पान के बोडे और पहलवान छाप  
 पत्र-पत्रिकाएँ  
 पुचका मे भरे रस की तरह  
 खट्टी-मीठी नमकीन कहानिया  
 नाचते बदर मदारी का खेल  
 आचल पसार अधी भिखारिन  
 पास लेटे वीमार बच्चे  
 चहलकदमी करत **औ**  
 चलते-फिरते चकलाघर  
 नथुना का फटकाती  
 गुजर जाती गंध  
 और छू-छू जाने का अहसास **ह**  
 सब कुछ बिखरा होता है  
 तुम्हारे आस-पास ।

लेकिन,  
 तुम्हारे आचल के नीचे बिछा है  
 एक और शहर ।

एक शहर जो  
 धडक रहा है तुम्हारे सीन मे  
 तुम्हें म्पदित कर रहा है—भूगर्भ रेल  
 एक शहर—तुम्हारे नीचे बह रहा है  
 एक शहर और  
 रेंग रहा है तुम्हारे ऊपर  
 रीत रहा है तुम्हें राज रात-दिन ।

तुम्हारे सीन पर  
 मंत्रीजी बन-महात्सव मना रह है  
 और नगरपालिका  
 सुलभ शौचालय बनवा रही है ।

एव शहर अधर में  
 तुम्हारे बिना खिंच रहा है  
 लैम्प-पास्टा व नीच  
 जलते घाव की मानिन्द  
 नगा सटा है ।

वही शहर  
 सूरज के उजाले का मुखौटा पहन  
 मफद लिगामा में लिपटा घूमता है ।

तुम्हारे विस्तर पर  
 बुमागियों विकती हैं  
 और विधवाएँ मधवा हाती हैं  
 भित्तारी ऋतुपत्र मनाते हैं  
 और भित्तारिणें बच्चे जनती हैं  
 हाटल के सामने वाले  
 नावदान से बटांगी गई  
 राटियों सूसती हैं  
 नग बच्चे भूल से बिलबिलाते हैं  
 बीमार बच्चे  
 अकाल-काल कवलित हात हैं  
 और बूढ़े भित्तारी ठण्ड से ठिठुरकर  
 दम तोड़ देते हैं ।

सबरा हाता है  
 नगरपालिका मय बुद्ध बटार लेता है  
 और एक बार फिर  
 तुम  
 सज-बज कर पसर जाती हो  
 हाशिये पर । ०

**मौसम यायावर हो गया है**

लगता है मौसम यायावर हो गया है  
किसी विगडेल विद्यार्थी की तरह  
जा कलिज-वद के दिना म भी  
शहर की जावारा सडका पर  
लडकिया का पीछा करता फिरता है ।

जब

मौसम का यह यायावरपन  
जावारापन-सा लगता है—  
क्याकि यह गाव के खेता-खलिहाना म  
खेलता-खेलता  
भाग आया है—  
शहर की चञ्ची उम्र वाली पक्की सडका पर ।

खती प्यासी है  
किसी गरीब किसान बाप की  
जवान क्वारी बटो की तरह  
लेकिन यह बार बार  
बरम जाता है

उही शहरी गहरी गद्दी नालियाँ म  
जिसमें न जाने कितने ध्रूण  
बे-मौजम वह चुके हात हैं ।

गाँव की माघी मिट्टी से महक  
इसमें नयुता का फडवा नहीं पाती  
दमलिये यह शहर की जाम ट्रैफिक  
क बीच आ खड़ा हो जाता है  
जहाँ घुटने भर जल में खड़ा  
घुटना से ऊपर  
साड़ियाँ समेट भीगी ओरतें  
अपने पल्लुआ का निचाड़ रही हाती हैं ।

सारी देह-गंध  
मडका पर जमे जल में घुल जाती है  
और गीली हवा में एक मात्रक  
महक तर जाती है ।

नगर-पालिका के प्रकाश-स्तम्भा  
से बंधे बनरा पर  
बार-बार बरस कर  
यह न जाने कितने नारे धा डालता है ।

कोलतार की स्लेटी मडका का  
जब यह पिघला देता है  
ता 'एकला' चलो र के साथ चलने वाली  
हजारों हवाई चप्पलें  
चप्पे-चप्पे पर चिपक जाती हैं  
और नारे भाप बनकर  
इतने ऊपर उड़ जाते हैं  
कि हवा में लहराती  
हमारी बद मुट्टियाँ की उछाल  
उह पकड़ नहीं पाती है । •

नक्सलपथी प्यार

कल तक तो तुम  
मात्र मुझे ही  
ललचाई नज़रा से देखा करती थी ।

अब सुनता हूँ  
तुम किसी और की जोर  
उही नज़रा से देखती हो ।

मुझे ऐसा लगता है  
तुम पश्चिम बंगाल हो  
और मैं  
तुम्हारे मन के पाक में स्थापित  
बिबेकानन्द की प्रतिमा  
जिसके चेहरे पर  
अलकतरा पात दिया गया है ।

लगता है  
तुम्हारा प्यार भी  
नक्सलपथी हो गया है । ०

## शब्द यात्रा

वर्णमाला से व्याकरण तक  
ढाई आखर के शब्द-यात्रा-पथ में  
व्याकरण के जंगल में  
मैं भटक रहा हूँ  
अर्थों की तलाश में—  
नारी और पुरुष के  
अनवृत्त सम्बन्धों के  
आदिम अर्थ ।



तब तुम स्वर थी  
और मैं व्यजन  
तुम्हारे सानिध्य से ही  
उच्चरित हुआ था मैं  
प्रथम बार ।

तब मैं भी एक सज्ञा था  
सज्ञा थी तुम भी  
दोनों सज्ञाओं को  
समय की अल्हड़ अँगुलिया ने  
पाछ दिवा धीरे से  
उस नटखट बालक की तरह  
जो अपनी स्लेट पर  
खडिया से लिखकर  
पोछ देता है पाठशाला में ।

समय-समय पर  
कारको में  
बदलते रह हम  
बनते-मिटते रह  
सम्बन्ध के झूठे सपने ।

जित में  
हमारे बीच  
शेष रहा  
मान  
सम्बन्ध का एक सम्बोधन ।

पने पलटते गये  
सबनाम से विशेषण बनते गए  
और हम  
भाववाचक सनामा में बदल गए । ०

काला हीरा

पहचाना मुझे ?

मैं तुम्हारी प्राणी-सभ्यता का आदिम अवशेष हूँ ।

मैं तुम्हारी सभ्यता का सबसे पुराना

मृष्टि के आदि पत्र का

प्रथम शिलालेख हूँ

मैं आग हूँ

वही आग

जो मेरी मुठिया में आज भी बंद है

वही आग

जा सूरज के पास है

वही आग

जिसे साक्षी मानकर सात फेरे डालकर  
किसी क्वारी कया की कोरी माँग में  
सिद्धरी किरण पहनाते हो ।

यही आग  
कभी नीले समुद्र की छाती पर  
काल-नतन करती है  
काली भवानी-सी शिव की छाती पर  
रक्त-रजित चरण रख चलती है ।

मुझ में वन्द है—एक विराट दावानल  
आज मैं कैद हूँ खानों में  
बन्द है जिस तरह तुम्हारा विनाश  
तुम्हारे ही बनाये परमाणु बमों में  
उसी तरह  
पिछले प्रलय का इतिहास मुझ में ही छिपा है  
मुझ काल-मजूपा में ही बन्द है  
तुम्हारे भवतर का कथानक ।

तुम्हारे दब, किन्नर, गंधर्व के  
रक्तचाप का ताप  
मेरी रगा में दीड़ने लगा  
आर भरा रंग काला हो गया ।

कुछ लोग कहते हैं  
मुझ में वनस्पतिया की हरियाली  
और प्राणिया के रक्त की लाली छिपी है  
कुछ लोग कहते हैं  
मैं कोयला हूँ काला पत्थर हूँ, डेला हूँ ।  
लेकिन मैं जानता हूँ  
मैं काला हीरा हूँ,  
नत्सन मैं डेला हूँ । •

और सब तो ठीक है !

अर, तुम !

वहाँ बधु, वब लोटे गांव से  
और सब ?

और सब तो ठीक है

गाड़ी दा घण्ट लेट आया ।

सो ता है हा

और सब ?

और सब ता ठीक है

पिताजी का बात की बीमारी हा गई है

बैद्यजी कह रहे थे

माताजी को दम की शिकायत है ।

सा ता है ही

और सब ?

और सब तो ठीक है

एक बीघा जमीन गिरवी रख दो है

मुझे बी० ए० करना है ।

सो ता है ही

और सब ?

और सब तो ठीक है

वह जो बुडिया थी न,

जिसका इक्कीता बंटा

मिलिट्री मे चला गया है

मर गयी ।

मर गयी ?

बेचारी !

और सब ?

और सब तो ठीक है  
पिताजी ने मना किया है  
“कविताओ से प्यूचर बिगड जाता है  
जवान हो चुके हो।”

सो तो है ही  
और सब ?

और सब तो ठीक है  
इस बार पिछले साल से भी अच्छी  
फसल होगी।

सो तो पिछले साल भी  
तुमने कहा था।  
और सब ?

और सब तो ठीक है  
वह जा फुलवतिया श्री न,  
पडास वाली चमारिन  
रमभजना के साथ भाग गयी।

भाग गयी ?  
छि । छि ॥  
खैर ! यह तो होता ही रहता है  
और सब ?

और सब तो ठीक है  
पिछले साल हैजा फैल गया था  
इस साल माताजी का प्रकोप है।

सो तो होता ही रहता है  
और सब ?  
और सब तो ठीक ही है । •

जीना क्या होता है ?

बधु !

हमने मांगी थी मनातन जिंदगी

अपने पुरखा से

और 'अथमेटिकल प्रोग्रेसन' में

लीटाता रहा

वक्त मान के साथ जोड़ता हुआ भविष्य ।

बधु !

हमने मांगी थी वूप की छाजन  
आगन के ऊपर ।

ध्याया रहा पर

बीती अधेरी रात का कोहरा

गुमसुम उदास दापहर के बतमान का बादल  
तट पर बठी अकेली माझ का अँधेरा ।

बधु !

हमन मांगी थी बिशुद्ध आत्मा

वह मिल ता गई

पर अब जिसका प्लास्टिक सजरी कर

शहरीकरण कर दिया गया है ।

बधु !

हम उन हरी घासा की तरह

विजन मे मेडा पर उगते

ता कितना सुखद हाता ?

—जो बार बार

परिचित परा तले रोदा कर भी

फिर हरिया जाती है ।

बधु !

हम भी जी लेत

अजनबीपन और असमथता के अहसाम

स थाळाद

मृत्यु-बाध से अपरिजित

यह जान बिना

कि जीना क्या होता है ! •

होड भरी जिंदगी

जिंदगी

खाली बाल्टी-मी

है कतारा भ

नला के सामन ।

होड भरन का लगा

टकराहटें हैं भभटें

झार जिसम है वही

आग बढ़ाकर

बाल्टी अपनी

है लेता भर

खबरदस्ती ।

तभी

पानी चला जाता

घडा अपना लिए खाली

मैं आता लौट घर

शुष्क मन उच्छवास भर । ०



हे राम !

हर साल दौड़ते रहें  
दफ्तरो के दरवाजे खटखटाते रहें  
नौकरी के लिए दरखवास्त पठाते रहे  
रोजगार दफ्तरों में अपने पजीयन-पत्र पर  
नयी तारीख की मुहर लगवाते रहे ।

हर साल एक नयी उम्मीद  
इस साल ज़रूर ।

—और इस तरह मेरी उमर के ढाई दशक  
दौड़ गए  
बढ़ हो गए सरकारी नौकरी के  
सभी दरवाजे ।

जाजादी के चालीस साल बाद  
आज फिर  
मुझसे दौड़न का कहा गया है ।  
जी हाँ, मैं दौड़ूँगा—ज़रूर दौड़ूँगा ।  
दौड़ेंगे मंत्रीजी, दौड़ेंगे नेताजी  
दौड़ेंगे बड़ी-बड़ी फिल्मी हस्तियाँ  
दौड़ेंगी बड़ी-बड़ी जाखे दूरदर्शन की  
में भी दौड़ूँगा—कमरे के पीछे  
जी हाँ, मैं भी दौड़ूँगा  
शांति-वन से शक्ति-स्थल तक  
विजय-चौक से पराजय-परिक्रमा तक  
और पार्लियामेंट की परिक्रमा करता-करता  
हे राम ! हे राम ! हे राम !!!

हाफता रहूँगा—हाफता रहूँगा । ०

बिटिया का गुल्लक और ब्याह

पापा से पाये पैसे से  
थोड़े खच कर  
कुछ कम खाकर  
कुछ राज बचाकर

पाँच बरस की बिटिया मेरी  
 पुस्तक का बस्ता विद्यालय से ही आकर  
 पटक मे परज चढ जाती है  
 सिक्के जा मुट्ठी मे उसके  
 कसे हुए है कद कभी से  
 ताखे पर रखे गुल्लक मे  
 एक-एक कर चुपके चोरी  
 डाल रही है ।

तभी शब्द सुनता मैं 'खन-खन'  
 —ध्यान भग कुछ हा जाता है  
 पुस्तक स मैं आख उठाकर  
 उसके चेहरे को पढता हूँ ।

आँखा मे जा खुशी तरती  
 मुभका वह आश्वस्त हरती  
 कहती मुभस—  
 पापा तुम दिल क मरीज हो  
 मेरी चिन्ता तुम ना करना  
 मैं पैस जा जोड रही हूँ  
 गुल्लक भर जाएगा एक दिन  
 तुम पाआगे ढेरो पैसे  
 उहे बैंक मे रख जाना तुम  
 सुनती हूँ थ बढ जायेंग  
 और उही पैसो-रुपया स  
 दूल्हा लाना,  
 धूमधाम स ब्याह रचाना  
 मैं उसस ही ब्याह कसूंगी  
 दूल्हन बनकर राह धरूंगी । ०

पुल के नीचे नाव

किसी पुल के नीचे स  
गुजरती नाव  
जब आद लेती है  
अचानक छाँव  
पल दा-चार पल ही

सुखद सिंह-सी  
लहर पर वह चली  
इस तरह कुछ  
वह मिली

दूर तक फैला  
उजाला ही उजाला  
धूप ही बस धूप है

पीछे रह गई छाया  
लहर से खेलती । ०

देश दरकती दीवार

वक्त की बोछार  
सह रही दीवार  
धुल रही सुर्खी  
जुडी हर ईंट  
जिससे ।

खड़ी है फिर भी  
बुलंदी में  
इमारत यह ।

कोपलें फूटी  
वही  
अब दीख रही दरार  
घट और पीपल की  
जड़ें फली  
शिराजो सी  
संस्कृति की ।

गिर कभी सकती है  
क्या दीवार ? ०

## सीपी और समुद्र

नहराता नीलाचल  
तट पर  
नृपित नयन युगल  
तकतो अविचल  
दुग्ध-धवल  
फेनिल सैवत पर  
प्रायित धक्कर ।

सीपियाँ तितर-वितर  
अनगिन आँख आगर-आखर  
लौट गई लहरें लिखकर  
रतीले तट पर  
अनबुझ जादिम प्यास मुखर ।

अस्ताचल पर  
ताम्र-कलश-मा दोप्त दिवाकर  
लहरों की छाती में भर  
उच्छ्वाम निरंतर  
रेता पर रेखायित कर  
अगजग की प्यास अमर ।

सामने या दृष्टि-पथ पर  
स्वप्न का सारा समंदर  
संध्या का स्नेहिल आचल  
चुन रहा था मन चंचल  
कृपण-सा  
सीपियाँ तट पर । •

बुद्ध की प्रतिमा पान की दुकान

बुद्ध की प्रतिमा सजी है  
पान की दुकान पर  
सिगरेट और माचिस के भी  
डिब्बे लगे हैं  
पास उसके ।

पान खाकर  
जाईन में देखता हूँ  
होठ से लिपटी हुई हैं  
खून की बूँदें ।

धूँक देता हूँ—अहर यह लाल  
आत्म-प्रवचना का  
मुस्कराकर । ०





